RESEARCH PAPER

RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
e-ISSN: 2455-3085 | Vol.06 | Iss.07 | July 2021 | pp. 60-64
Double-Blind Peer Reviewed/Refereed Journal

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के धर्मिक विचारों का परिशीलन

*डॉ0 प्रशान्त उपाध्याय

अस्टिेन्ट प्रोफेसर –प्राचीन इतिहास विभाग स्व0रामराज वर्मा महावि0 सारंगपुर, सुलतानपुर

Abstract

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के धर्म संबंधी विचारों का विश्लेषण सम्यक तरीके से नहीं हुआ है। इसके दो कारण हैं। पहला यह कि एक लंबे अर्से से भारत में धर्म पर विचार, केवल 'हिन्दू–मुस्लिम प्रश्न' तक सिमट कर रह गया है और दूसरा, क्योंकि 'प्रगतिशीलों' ने हमेशा धर्म को नज़रअंदाज़ किया दृ उदारवादी यह कहते रहे कि धर्म, व्यक्ति का निजी मामला है और होना चाहिए और इसलिए उस पर सार्वजनिक विमर्श का कोई अर्थ नहीं है। मार्क्सवादियों का यह तर्क रहा है कि धर्म एक फरेब है, जो लोगों को उनके असली आर्थिक हितों को समझने से रोकता है। परंतु क्या हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ कर सकते हैं कि धर्म आज भी हमारी राजनीति और सामान्य लोगों की रोज़मर्रा की जिंदगी में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। उन्होंने खुलकर कहा कि ऐसा राष्ट्रवाद, जो देश के नागरिकों के एक बड़े तबके (अर्थात अछूतों) को अलग–थलग रखता है और उन्हें प्रताड़ित करता है, वह राष्ट्रवाद कहलाने लायक नहीं है। अम्बेडकर लिखते हैं कि धर्म, मानव समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा इसलिए है क्योंकि वह मानव जीवन के आधारभूत प्रश्नों से जुड़ा हुआ है जिनमें जन्म और मृत्यु, भोजन और रोग आदि शामिल हैं। परंतु यह कहने कि धर्म, मानव के अस्तित्व का भाग है, का यह अर्थ नहीं है कि सभी स्थानों और सभी कालों में धर्म मूलतः समान रहा है। सच्चाई इसके ठीक उलट है। अम्बेडकर का कहना था कि धर्म का इतिहास, क्रांतियों का इतिहास है और धर्म को समझने के लिए हमें पूरी दुनिया में उसमें आए भारी परिवर्तनों पर ध्यान देना होगा।

Keywords: *बौद्ध धर्म ही सच्चा धर्म है और मैं ज्ञान, सद्मार्ग और करुणा के प्रकाश में जीवनयापन करूंगा।*

Article Publication

Published Online: 15-Jul-2021

***Author's Correspondence**

डॉ0 प्रशान्त उपाध्याय

अस्टिेन्ट प्रोफेसर –प्राचीन इतिहास विभाग स्व0रामराज वर्मा महावि0 सारंगपुर, सुलतानपुर

ishekhar7[at]gmail.com

10.31305/rrijm.2021.v06.i07.009

© 2021The Authors. Published by RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary. This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने यह बात 1950 में 'बुद्ध और उनके धर्म का भविष्य' नामक एक लेख में कहा था कि यदि नई दुनिया पुरानी दुनिया से भिन्न है तो नई दुनिया को पुरानी दुनिया से अधिक धर्म की जरूरत है. वे कई बरस पहले से ही मन बना चुके थे कि वे उस धर्म में अपना प्राण नहीं त्यागेंगे। जिस धर्म में उन्होंने अपनी पहली सांस ली है।

14 अक्टूबर 1956 को उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया. आज उनके इस निर्णय को याद करने का दिन है.। यह उनका कोई आवेगपूर्ण निर्णय नहीं था, बल्कि इसके लिए उन्होंने पर्याप्त तैयारी की थी. अपने भाषण उन्होंने कहा कि असमानता और उत्पीड़न के प्रतीक, अपने प्राचीन धर्म को त्यागकर आज मेरा पुनर्जन्म हुआ है। अवतरण के दर्शन में मेरा कोई विश्वास नहीं है, यह दावा सरासर ग़लत और शातिराना होगा कि बुद्ध भी विष्णु के अवतार थे। मैं किसी हिन्दूदेवी–देवता का भक्त नहीं हूँ। आइंदा मैं कोई श्राद्ध नहीं करूंगा। मैं बुद्ध के बताए अष्टमार्ग का दृढ़ता से पालन करूंगा। बौद्ध धर्म ही सच्चा धर्म है और मैं ज्ञान, सद्मार्ग और करुणा के प्रकाश में जीवनयापन करूंगा।'

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के धर्म संबंधी विचारों का विश्लेषण सम्यक तरीके से नहीं हुआ है। इसके दो कारण हैं। पहला यह कि एक लंबे अर्से से भारत में धर्म पर विचार, केवल 'हिन्दू–मुस्लिम प्रश्न' तक सिमट कर रह गया है और दूसरा, क्योंकि 'प्रगतिशीलों' ने हमेशा धर्म को नज़रअंदाज़ किया दृ उदारवादी यह कहते रहे कि धर्म, व्यक्ति का निजी मामला है और होना चाहिए और इसलिए उस पर सार्वजनिक विमर्श का कोई अर्थ नहीं है। मार्क्सवादियों का यह तर्क रहा है कि धर्म एक फरेब है, जो लोगों को उनके असली आर्थिक हितों को समझने से रोकता है। परंतु क्या हम इस

तथ्य को नज़रअंदाज़ कर सकते हैं कि धर्म आज भी हमारी राजनीति और सामान्य लोगों की रोज़मर्रा की जिंदगी में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर धर्म के कटु और निर्भीक आलोचक तो थे ही, इसके साथ–साथ उन्हें धर्म की गहरी समझ भी थी। यह अनूठा था, क्योंकि उनके समय में सार्वजनिक जीवन में सक्रिय लोग या तो धर्म को बांटने वाला और अतार्किक कहकर उसकी आलोचना करते थे या गांधी की तरह, यह मानते थे कि सभी धर्म सच्चे और हमारे सम्मान के पात्र हैं। आधुनिक भारत में सर्व धर्म सम भाव की परिकल्पना (अर्थात राज्य द्वारा सभी धर्मों को एक दृष्टि से देखना) धर्मनिरपेक्षता की कसौटी बन गया है। यह कसौटी इसी विचार पर आधारित है कि सभी धर्म मूलतः अच्छे हैं। आंबेडकर जहां यह मानते थे कि धर्म, जीवन के लिए अपरिहार्य है और सार्वजनिक जीवन में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका है, वहीं वे इस बात से सहमत नहीं थे कि सभी धर्म अच्छे हैं। उन्होंने जब हिन्दू धर्म को असमानता का धर्म बताया क्योंकि वह जाति को पवित्र दर्जा देता है; या जब वे अपने समर्थको के साथ बौद्ध बने, तब, दरअसल, जो वे कह रहे थे, वह यह था कि धर्म की आलोचना की जा सकती है, और की जानी चाहिए। वे धर्म को खारिज नहीं कर रहे थे; वे एक ज़्यादा न्यायपूर्ण और सच्चे धर्म की ओर बढ़ रहे थे। यही कारण है कि डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के काल में धर्म की आलोचना करना बहुत कठिन बन गया था। वह इसलिए भी क्योंकि धर्म की आलोचना को राष्ट्रीय संस्कृति की आलोचना के रूप में देखा जाता था। जब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म की आलोचना की तो उससे उनके कई समकालीनों को धक्का लगा। इनमें गांधी शामिल थे। इन लोगों की यह मान्यता थी कि धर्म की आलोचना, दरअसल, भारतीय राष्ट्रवाद की आलोचना है। परंतु डॉ0 भीमराव अम्बेडकर अपनी बात से डिगे नहीं। उन्होंने खुलकर कहा कि ऐसा राष्ट्रवाद, जो देश के नागरिकों के एक बड़े तबके (अर्थात अछूतों) को अलग–थलग रखता है और उन्हें प्रताड़ित करता है, वह राष्ट्रवाद कहलाने लायक नहीं है। रवीन्द्रनाथ टेगौर के अतिरिक्त, आंबेडकर, उन चंद साहसी व्यक्तियों में से थे जिन्होंने उस समय राष्ट्रवाद की समालोचना की, जब भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन अपने चरम पर था। जब आंबेडकर ने अछूतों को 'सामाजिक अल्पसंख्यक' बताया और दलित वर्गों के लिए मुसलमानों की तरह पृथक मताधिकार की मांग की तब, दरअसल, वे बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक शब्दों को पुनर्परिभाषित कर रहे थे। वे उन्हें धार्मिक–सांस्कृतिक नहीं बल्कि विधिक–संवैधानिक वर्ग बता रहे थे।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का यह तर्क भी था कि धर्म को केवल सांस्कृतिक पहचान तक सीमित कर देना, उसे उसके असली महत्व से विहीन कर देना है। आंबेडकर यह चाहते थे कि वे धर्म को स्वनियुक्त धार्मिकतावादियों के चंगुल से मुक्त करें (उन धार्मिकतावादियों के, जिन्होंने धर्म को केवल सांस्कृतिक आचरणों और प्रतीकों तक सीमित कर दिया था) और धर्म के दार्शनिक और धर्मशास्त्रीय आयामों पर फिर से लौटें। यह आंबेडकर के धर्म पर पुनर्विचार का महत्वपूर्ण पक्ष था जिस पर हमें ध्यान देना चाहिए। अपनी पुस्तक 'फिलॉसफी ऑफ हिन्दुज़्म' में अम्बेडकर लिखते हैं कि धर्म, मानव समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा इसलिए है क्योंकि वह मानव जीवन के आधारभूत प्रश्नों से जुड़ा हुआ है जिनमें जन्म और मृत्यु, भोजन और रोग आदि शामिल हैं। परंतु यह कहने कि धर्म, मानव के अस्तित्व का भाग है, का यह अर्थ नहीं है कि सभी स्थानों और सभी कालों में धर्म मूलतः समान रहा है। सच्चाई इसके ठीक उलट है। अम्बेडकर का कहना था कि धर्म का इतिहास, क्रांतियों का इतिहास है और धर्म को समझने के लिए हमें पूरी दुनिया में उसमें आए भारी परिवर्तनों पर ध्यान देना होगा। का कहना था कि ''क्रांति, दर्शन की जननी है''। यह दिलचस्प है कि आंबेडकर आधुनिकता के पारंपरिक आख्यान से सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि विज्ञान का उदय और धर्म पर उसकी तथाकथित विजय, धर्म के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण घटनाक्रम नहीं था। अम्बेडकर के अनुसार धर्म के इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण क्रांति थी ईश्वर का अविष्कार। यह धर्म के बारे में अम्बेडकर की सोच का सबसे दिलचस्प पहलू है। 'आदिम' धर्मों के मानवशास्त्रीय अध्ययन से अम्बेडकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि धर्म के पुराने स्वरूपों में न तो ईश्वर की अवधारणा थी और ना ही नैतिकता की। उस काल में धर्म मुख्यतः मृत्यु, बीमारी, जन्म, प्रगति, भोजन व अभावों जैसे सांसारिक मसलों से संबंधित था और उसके ज़रिए प्राकृतिक शक्तियों जैसे सूर्य, वर्षा, वायु, महामारियों इत्यादि को प्रसन्न करने की कोशिश की जाती थी। ये शक्तियां न तो अच्छी थीं और ना ही बुरी, न नैतिक और ना ही अनैतिक। उन्हें तो केवल तुष्ट किया जाना था, उनका दोहन किया जाना था और कभी–कभी उनसे संघर्ष किया जाना था। तत्कालीन समाज में नैतिकता तो थी परंतु वह मनुष्यों के परस्पर संबंधों को निर्धारित करने वाले मानदंडों के स्वरूप में थी। उसका धर्म से कोई लेनादेना नहीं था।

धर्म और 'राजनीतिक समाज :

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के अनुसार आदिम युग में नहीं बल्कि प्राचीन काल में ईश्वर का विचार, धर्म का हिस्सा बना और इससे धर्म के इतिहास की पहली क्रांति हुई। ईश्वर की परिकल्पना की उत्पत्ति धर्म से इतर थी। शायद वह बड़े और शक्तिशाली व्यक्तियों , नायकों या राजाओं के प्रति श्रद्धा भाव से उपजी या फिर इस दुनिया के संचालक/निर्माता के बारे में शुद्ध दार्शनिक अटकलबाजी से। ईश्वर के अविष्कार के बाद दूसरी बड़ी क्रांति हुई और वह थी धर्म का नैतिकता के साथ जुड़ाव। पूर्वकाल में ईश्वर और मनुष्यों के बीच के संबंध पारिवारिक हुआ करते थे। देवताओं को अक्सर माता–पिता कहा जाता था। जिसे अम्बेडकर 'राजनीतिक समाज' कहते हैं, वह सांझा पुरखे–ईश्वर के वंशजों और उसके आराधकों से मिलकर बनता था और इसलिए प्रतिस्पर्धी राजनीतियों के प्रतिस्पर्धी ईश्वर हुआ करते थे। दूसरे शब्दों में, अमूर्त नैतिक नियमों की बजाए, मानव संबंधों को वंशावली और परिवार संबंधी नियम निर्धारित और नियंत्रित करते थे। परंतु आने वाले समय में, जब समाज को केवल मनुष्यों का संघ माना जाने लगा और ईश्वर राजनीतिक समाज का अंग न होकर लोकोत्तर तत्व बन गया, उसके बाद मानव और ईश्वर के संबंध पारिवारिक न होकर आस्था और विश्वास से जुड़ गए। समुदाय के सार्वजनिक और नागरिक जीवन पर नज़र रखने की बजाए ईश्वर अब व्यक्तियों पर नज़र रखने लगा और उनके व्यक्तिगत अंन्तःकरण और आचरण को नियंत्रित करने लगा। नैतिकता और धार्मिकता का परस्पर मेल हो गया। इसके बाद एक ऐसे समुदाय की कल्पना करना संभव हो गया, जिसमें विभिन्न ईश्वरों की आराधना करने वाले लोग हों। इसके साथ ही, एक ऐसे सार्वलौकिक ईश्वर की कल्पना भी संभव हो गई जो संपूर्ण मानवता के कार्याकलापों का व्यवस्थापक हो। उसके बाद से धर्म का परिवर्तन, आवश्यक रूप से राष्ट्रीयता का परिवर्तन नहीं रह गया। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के शब्दों में:"इस प्रकार धार्मिक क्रांति, समाज के धार्मिक संगठन में क्रांति नहीं थी, जिसके नतीजे में समाज की बजाए व्यक्ति केन्द्र में आ गया। वह प्रतिमानों की क्रांति थी३इस बारे में कोई विवाद हो सकता है कि दोनों में से कौनसे प्रतिमान नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ हैं परंतु मैं नहीं सोचता कि इस बारे में कोई विवाद हो सकता है कि ये प्रतिमान नहीं हैं।" दूसरे शब्दों में, आधुनिक काल में धर्म के मुद्दे पर वाद–विवाद, सार्वजनिक जीवन के नियामक ढ़ांचे पर केन्द्रित वाद–विवाद बन जाता है। और वह भी तब जब धर्म को केवल सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में न देखा जाए।

धर्म और नैतिकता:

अम्बेडकर एक बहुत साधारण सी बात कह रहे थे और वह यह कि किसी धर्म की श्रेष्ठता की जांच की कसौटी, वह नैतिकता होनी चाहिए जिसे वह अपने अनुयायियों में बढ़ावा देता है। इस आधार पर हिन्दू धर्म निश्चित तौर पर कमजोर है क्योंकि वह पदक्रम, असमानता और अछूत प्रथा को वैध ठहराता है। दूसरी ओर, बौद्ध धर्म एक नैतिक धर्म है क्योंकि वह जाति, लिंग और प्रजाति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता। बौद्ध धर्म हमेशा से नीची जातियों के लोगों और महिलाओं का बौद्ध संघों में स्वागत करता आया है और वैदिक यज्ञों में मासूम पशुओं की बलि देने का आलोचक रहा है। परंतु यहां अम्बेडकर केवल धर्म के नाम पर नैतिकता को वैध नहीं ठहरा रहे हैं। उनका तर्क इससे कहीं अधिक जटिल है। अपनी पुस्तक 'द बुद्धा एण्ड हिज़ धम्म'', जो उन्होंने अपनी मृत्यु के कुछ ही समय पहले लिखी थी, वह ऐसा धर्म है जिसमें न ईश्वर और ना ही पैगम्बरों की मध्यस्थता की जरूरत है और ना ही वह आत्मा जैसी किसी अमर आंतरिक शक्ति पर निर्भर है। उनके लिए धर्म का संबंध ईश्वर या आत्मा से नहीं बल्कि सामान्य नश्वर मनुष्य और उसकी रोजाना की जिदंगी से है। बौद्ध ग्रंथ केवल शून्यता, दुःख, विश्व के अस्थायित्व, अहिंसा व प्रतीत्यसमुत्पाद की दार्शनिक अवधारणाओं के आधार पर मनुष्य की स्थिति पर चिंतन हैं। बौद्ध धर्म, दुनिया को क्षणभंगुर और सतत परिवर्तनशील मानता है और हमें यह गारंटी नहीं देता कि हमारे ऊपर कृपालु ईश्वर है और यह कि मृत्यु के बाद भी हमारी आत्मा जीवित रहेगी। और इसी कारण बौद्ध धर्म में परिवर्तन लाने की असीम संभावनाएं हैं। इसलिए आंबेडकर शील पर जोर देते हैं, जिसके बिना ज्ञान भी बेकार है। अम्बेडकर कहते हैं कि नवायन में धर्म ही नैतिकता है और नैतिकता ही धर्म है।

कर्म का संशोधित सिधान्त :

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर कर्म की पारंपरिक ब्राम्हणवादी अवधारणा के कटु विरोधी थे। वे कर्म के आधुनिक राष्ट्रवादी सिद्धांत के भी कटु आलोचक थे, जो यह कहता था कि हमें कोई भी काम बलिदान स्वरूप करना चाहिए और इसे करते समय न तो भयग्रस्त होना चाहिए और ना ही कोई फल पाने की इच्छा करनी चाहिए। बौद्ध धर्मग्रंथों के

आधार पर आंबेडकर ने अपनी पुस्तक 'रेवोल्यूशन एण्ड काउंटर रेवोल्यूशन इन इंडिया' में भगवदगीता की समालोचना की। इसमें उन्होंने कर्म के सिद्धांत का एक संशोधित संस्करण प्रस्तावित किया, जिसके अनुसार हर कार्य के अनिवार्य और अपरिहार्य परिणाम होते हैं, चाहे वे तुरंत हों या बाद में और वे परिणाम इसी दुनिया में होते हैं और कई बार उनका प्रभाव मनुष्यों के समूहों पर भी पड़ता है। दूसरे शब्दों में हर व्यक्ति अपने कार्यों के लिए जिम्मेदार है क्योंकि उसके कार्यों के परिणाम केवल उसे ही प्रभावित नहीं करते बल्कि पूरी दुनिया पर भी प्रभाव डालते हैं। अतः अपनी जिम्मेदारी को स्वीकारना ही नैतिकता है। आंबेडकर का कहना था कि नैतिकता केवल सही नियमों का पालन करना नहीं है, बल्कि नैतिकता तो नियमों के बारे में है ही नहीं। वह तो सिद्धांतों के बारे में है। नियम हमें बताते हैं कि हम क्या करें और कैसे करें। नियम हमें एक लीक पर चलना सिखाते हैं। 'मनुस्मृति' इसी तरह के विस्तृत नियमों का संकलन है। सच्चा धर्म, सिद्वांतों का धर्म है नियमों का धर्म नहीं क्योंकि सिद्धांतों का धर्म ही रचनात्मक, जिम्मेदार और स्वतंत्र धार्मिक व्यक्तियों को जन्म देता है।

समाजिक परिवर्तन में धर्म की भूमिका :

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर काण्ट की इस आधुनिक अवधारणा से सहमत नहीं थे कि नैतिकता केवल तार्किक और मानसिक विवेक है (काण्ट का कहना था कि नैतिकता के लिए धर्म के आधार की जरूरत नहीं है)। आंबेडकर की नैतिकता एक प्रकार की पवित्रता से जुड़ी हुई थी और इस पवित्रता का संबंध केवल तार्किकता से नहीं था। इस नैतिकता का पालन करने के लिए उस तरह की प्रतिबद्धता की जरूरत थी, जिस तरह की प्रतिबद्धता की मांग धार्मिक आस्था करती है। यह प्रतिबद्धता हमें अंत तक लड़ने और अपना बलिदान देने की प्रेरणा देती है। और ऐसा इसलिए नहीं था क्योंकि आंबेडकर पारंपरिक अर्थों में परंपरावादी थे। ऐसा इसलिए था, क्योंकि जैसा कि आंबेडकर ने सन् 1950 में लिखे अपने लेख 'बुद्धा एण्ड द फ्यूचर ऑफ हिज़ रिलीजन' में लिखा थाः ''नई दुनिया को पुरानी दुनिया की तुलना में धर्म की कहीं अधिक जरूरत है।'' उनका आशय था कि नैतिकता के रूप में धर्म, आधुनिकता की जरूरत है। आंबेडकर का कहना था कि नई दुनिया को धर्म की जरूरत इसलिए है क्योंकि कानून समाज को बदलने के उपकरण के रूप में अप्रभावी और अविश्वसनीय है। उनके शब्दों में :_"कानून का उद्देश्य अल्पसंख्यकों को सामाजिक अनुशासन के दायरे में रखना है। बहुसंख्यकों को तो नैतिकता के सिद्धांतो के आधार पर अपने सामाजिक जीवन का संचालन करने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए और छोड़ देना पड़ता है। इसलिए नैतिकता के अर्थ में धर्म, हर समाज का शासी सिद्धांत होना चाहिए।"_और यह बात उस व्यक्ति ने कही, जो हमारे युग का सबसे बड़ा संविधानवादी और विधिक सुधारक था। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि अम्बेडकर धर्म पर इसलिए पुनर्विचार कर रहे थे क्योंकि उन्हें आधुनिक राज्य और आधुनिक उदारवाद के 'विधि के शासन' की सीमाओं का अहसास था (यह मात्र संयोग नहीं था कि उन्होंने नेहरू सरकार के विधिमंत्री के पद से इस्तीफा देने के बाद, बौद्ध धर्म अंगीकार किया। उन्हें यह अहसास हो गया था कि हिन्दू संयुक्त परिवार–जो भारत में जातिगत और लैंगिक भेदभाव के मूल में था–में कानून के जरिए सुधार लाना असंभव है)।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के धर्म के पुनर्विचार का अंतिम पक्ष यह है कि आंबेडकर धर्म को एक ऐसी शक्ति मानते थे जो राज्य और कानून की सीमाओं पर कार्य करती है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि 2 दिसंबर 1956 को, उनकी मृत्यु के केवल चार दिन पहले, उन्होंने एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था **'बुद्धा ऑर मार्क्स '**। इस लेख में उन्होंने लिखा कि "बौद्ध धर्म और मार्क्सवाद में कुछ मूलभूत समानताएं हैं। जैसे, दोनों यह मानते हैं कि निजी संपत्ति सभी असमानताओं का स्त्रोत है और इसलिए बौद्ध धर्म में भिक्षु की अवधारणा है और मार्क्सवाद में सर्वहारा की। ये दोनों वे वर्ग हैं जिनके पास खोने के लिए कुछ नहीं है और इसलिए उनमें परिवर्तन का शक्तिशाली कारक बनने की संभावनाएं हैं।" परंतु मार्क्सवाद और बौद्ध धर्म इसके आगे अलग–अलग रास्तों पर चले जाते हैं। मार्क्सवाद, धर्म को आम लोगों की अफीम बताकर खारिज कर देता है और राज्य को सामाजिक परिवर्तन का प्राथमिक उपकरण मानता है। अम्बेडकर का तर्क है कि धर्म वहां से शुरू होता है, जहां राज्य का क्षेत्राधिकार समाप्त होता है।

धर्मनिरपेक्षता का अम्बेडकर आधुनिक सिद्धांत, जो यह कहता है कि धर्म के समाप्त हो जाने के बाद शुद्ध राजनीति का उदय होगा, के विपरीत अम्बेडकर का तर्क यह है कि धर्म तब सक्रिय होगा, जब धर्मनिरपेक्ष राजनीति असफल हो जाएगी या थक जाएगी। इसलिए जो लोग यह मानते हैं कि अम्बेडकर का विचार यह था कि धर्म, राजनीति के अधीन एक उपकरण है वे गलत सोचते हैं। अम्बेडकर का धर्म पर पुनर्विचार, धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक सहिष्णुता के उदारवादी ढांचे की मदद के बगैर नहीं समझा जा सकता। नागरिक धर्म सभी मनुष्यों की प्राकृतिक व मूल समानता पर

आधारित है। इसलिए आज जरूरत एक नए और अभूतपूर्व धर्म की है क्योंकि धर्म के अलावा किसी चीज से काम नहीं चलेगा। मनुष्य एवम उसके धर्म को समाज के द्वारा नैतिकता के आधार पर चयन करना चाहिये। अगर धर्म को ही मनुष्य के लिए सब कुछ मान लिया जायेगा तो किन्ही और मानको का कोई मूल्य नहीं रह जायेगा लोग और उनके धर्म सामाजिक मानकों द्वारा; सामजिक नैतिकता के आधार पर परखे जाने चाहिए। अगर धर्म को लोगो के भले के लिए आवशयक मान लिया जायेगा तो और किसी मानक का मतलब नहीं होगा।

Reference

1. Dr. Thaawarchand Gehlot Minister for Social Justice & Empowerment, Govt. of India and Chairperson,
2. Dr. Ambedkar Foundation Shri Ramdas Athawale Minister of State for Social Justice & Empowerment, Govt. of India.
3. Shri Krishan Pal Gurjar Minister of State for Social Justice & Empowerment, Govt. of India.
4. Shri Rattan Lal Kataria Minister of State for Social Justice & Empowerment, Govt. of India.
5. Shri R. Subrahmanyam Secretary, Ministry of Social Justice & Empowerment, Govt.of India
6. Dr. Babasaheb Ambedkar Writings & Speeches Vol. 2
7. Dr. Babasaheb Ambedkar Writings & Speeches Vol. 3